Volume 2; Issue 4
October to December 2025
E-ISSN: 3048-6742

Sanskriti-Samvahika
संस्कृति-संवाहिका

Peer Reviewed Indexed Refereed Journal

Quarterly Journal

Editor-in-Chief

Dr. Ashwini Devi

Sanskriti-Samvahika संस्कृति-संवाहिका

E-ISSN: 3048-6742

https://sanskritisamvahika.in

Volume 2; Issue 4; October to December, 2025; Page No. 37-45

Peer Reviewed, Indexed and Refereed Journal

योगदर्शनानुसार समाधि और कैवल्य का सम्बन्ध : एक अध्ययन

नाजमा हासान

शोधार्थी

विश्वविद्यालय स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,

ल. ना. मि. विश्वविद्यालय,दरभंगा, बिहार।

Email: najmahasan1993@gmail.com

शोध सार

भारतीय दार्शनिक परम्परा में 'समाधि' और 'कैवल्य' की अवधारणाएँ मानव जीवन के परम लक्ष्य 'मुक्ति' से गहरे रूप में जुड़ी हुयी हैं। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य इन दोनों तत्त्वों के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण करना तथा उनके दार्शनिक आधारों को स्पष्ट करना है। समाधि को सामान्यतः योगदर्शन में चित्तवृत्तियों के निरोध की उच्चतम अवस्था के रूप में परिभाषित किया गया है, जबकि कैवल्य को आत्मा की पूर्ण स्वतन्त्रता, शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठा एवं जन्म-मरण के बन्धनों से मुक्ति की अन्तिम अवस्था माना गया है। योगदर्शन के परिप्रेक्ष्य में समाधि एवं कैवल्य के स्वरूप, साधन एवं साध्य के सम्बन्ध का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। योगदर्शन के अनुसार समाधि कैवल्य की प्राप्ति का अनिवार्य साधन है, जिसके माध्यम से साधक क्लेशों और संस्कारों से मुक्त होकर पुरुष की स्वतन्त्र सत्ता का अनुभव करता है। इसके विपरीत अद्वैत वेदान्त में मोक्ष आत्मज्ञान का प्रतिफल माना गया है, जहाँ समाधि को सहायक साधन के रूप में स्वीकार किया गया है, न कि अन्तिम साध्य के रूप में। समाधि और कैवल्य के मध्य सम्बन्ध साधन और साध्य का है, यद्यपि विभिन्न दर्शनों में इसकी व्याख्या में सूक्ष्म भिन्नताएँ विद्यमान हैं। समाधि साधक के अन्तःकरण को शुद्ध एवं स्थिर बनाकर उसे आत्मसाक्षात्कार के योग्य बनाती है, जबकि कैवल्य उस साधना की अन्तिम परिणति है। इस प्रकार यह शोधपत्र न केवल इन दोनों अवधारणाओं के दार्शनिक महत्त्व को स्पष्ट करता है,

अपितु साधना-पथ की उस गहन प्रक्रिया को भी उजागर करता है, जो मानव को आत्मबोध एवं परम मुक्ति की ओर अग्रसर करती है।

कूटशब्द – समाधि, कैवल्य, चित्तवृत्ति निरोध, आत्मज्ञान, मोक्ष, अन्तःकरण शुद्धि।

भारतीय दर्शन परम्परा में मानव जीवन के परम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु विविध साधन एवं मार्गों का विस्तृत निरूपण किया गया है। इन मार्गों में योग और वेदान्त की परम्पराएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिनमें 'समाधि' और 'कैवल्य/मोक्ष' की अवधारणाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। समाधि को जहाँ चित्तवृत्तियों के निरोध की चरम अवस्था माना गया है, वहीं कैवल्य को आत्मा की पूर्ण स्वतन्त्रता, शुद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठा तथा जन्म-मरण के बन्धन से परम मुक्ति के रूप में व्याख्यायित किया गया है। इस प्रकार ये दोनों अवधारणाएँ साधना और साध्य के रूप में एक-दूसरे से गहरे रूप में सम्बद्ध प्रतीत होती हैं। समाधि, विशेषकर योगदर्शन में साधना की वह उच्चतम अवस्था है, जिसमें साधक का चित्त विषय-विकारों से रहित होकर अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाता है। पतञ्जलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है - **"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः"**[i] और इसी का परिपाक समाधि में होता है। दूसरी ओर 'कैवल्य' वह अन्तिम अवस्था है, जिसमें पुरुष प्रकृति के समस्त बन्धनों से मुक्त होकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता में स्थित होता है। यह पूर्ण आत्म-साक्षात्कार और मोक्ष की अवस्था है, जहाँ द्वैत का सर्वथा अभाव हो जाता है। यद्यपि 'समाधि और कैवल्य' दोनों ही उच्च आध्यात्मिक अवस्थाएँ हैं, तथापि उनके स्वरूप, साधन और परिणाम के सन्दर्भ में विभिन्न दर्शनों में भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण देखने को मिलते हैं। कुछ मतों में समाधि को ही कैवल्य की प्राप्ति का साधन माना गया है, जबकि अन्य मतों में इसे केवल एक माध्यम या प्रक्रिया के रूप में देखा गया है। विशेषतः योग और अद्वैत वेदान्त के बीच इस विषय पर सूक्ष्म दार्शनिक भिन्नताएँ विद्यमान हैं, जिनका अध्ययन इस शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य है। प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य 'समाधि और कैवल्य' के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण करना, उनके दार्शनिक आधारों को स्पष्ट करना तथा यह समझना है कि क्या समाधि कैवल्य की अनिवार्य पूर्वावस्था है अथवा केवल एक साधन मात्र। इसके माध्यम से न केवल इन दोनों अवधारणाओं की गहनता को समझा जा सकेगा अपितु भारतीय दर्शन में मोक्ष की व्यापक अवधारणा का भी सम्यक् बोध होगा। अतः 'समाधि' और 'कैवल्य' के

अन्तर्सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए साधना-पथ की उस सूक्ष्म कड़ी को उद्घाटित करने का प्रयास करता है, जो साधक को आत्मबोध और परम मुक्ति की दिशा में अग्रसर करती है।

पतञ्जलि योगदर्शन का परम लक्ष्य ‘कैवल्य’ माना गया है। योगसूत्र के अनुसार साधना की समस्त प्रक्रिया अभ्यास, वैराग्य, समाधि तथा वृत्ति-निरोध अन्ततः साधक को ‘कैवल्य’ की प्राप्ति की ओर ले जाती है। ‘कैवल्य’ की स्थिति वही है, जहाँ आत्मा अपनी मौलिक शुद्धता और स्वाधीनता में स्थित हो जाती है। ‘कैवल्य’ शब्द का तात्पर्य है – पुरुष (आत्मा) का अपने स्वरूप में अकेले (केवल हो जाना) प्रतिष्ठित होना। यहाँ ‘अकेले’ का अर्थ है – ‘केवल पुरुष मात्र’ शेष रह जाना अर्थात् ‘केवल हो जाने के भाव’ को ही ‘कैवल्य’ कहा गया है। इसमें पुरुष अर्थात् आत्मा का किसी भी प्रकार के बाह्य सम्बन्ध, चाहे वह प्रकृति हो अथवा उसकी गुणात्मक क्रियाएँ हो, उनसे मुक्त हो जाना ही ‘कैवल्य’ है। जब तक आत्मा प्रकृति के गुणों सत्त्व, रजस् और तमस् से सम्बद्ध रहती है, तब तक वह बन्धन में बँधी रहती है, परन्तु साधना के चरम सोपान पर पहुँचकर, जब आत्मा प्रकृति से पूर्णतया विलग हो जाती है, तभी वह ‘कैवल्य’ की अवस्था को प्राप्त करती है। पातञ्जल योगसूत्र व्यासभाष्य में स्पष्ट कहा गया है कि ‘कैवल्य’ पुरुष (आत्मा) की स्वरूप प्रतिष्ठा है अर्थात् पुरुष (चितिशक्ति) का अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाना - **कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा चितिशक्तेरिति**[ii]**।** ‘चितिशक्ति’ शब्द यहाँ पुरुष या आत्मा के चैतन्यस्वरूप को इङ्गित करता है और जब वह बाह्योपाधियों से मुक्त होकर ‘केवल’ अपने अस्तित्व में स्थित होता है, तब वह ‘कैवल्य’ कहलाता है। ‘कैवल्य’ की स्थिति में आत्मा किसी प्रकार के विषय-भोग, संस्कार या कर्म के प्रभाव में नहीं रहती। यह आत्मा की पूर्ण स्वतन्त्रता है, जहाँ उस पर प्रकृति का कोई वर्चस्व नहीं रह जाता। इसे ही परम मुक्ति कहा गया है। यह मुक्ति केवल नकारात्मक अर्थों में बन्धन से छूटना नहीं है, अपितु आत्मा की सकारात्मक स्थिति है, जहाँ वह शुद्ध चैतन्य, आनन्दरूप और स्वतःप्रकाशमान होकर प्रतिष्ठित रहती है।

पातञ्जल योगदर्शन में समाधि और कैवल्य का सम्बन्ध कारण और कार्य के रूप में स्थापित किया गया है। वास्तव में समाधि वह साधन है, जिसके माध्यम से साधक आत्मा के स्वरूप का प्रत्यक्ष अनुभव करता है और यही प्रत्यक्षानुभूति आगे चलकर ‘कैवल्य’ की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। समाधि की अवस्था में चित्त की समस्त वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं। जब चित्त निर्विकल्प और निरविकार होकर अपने वास्तविक आधार पर अवस्थित होता है, तब पुरुष (आत्मा) का साक्षात्कार सम्भव होता है। इस स्थिति में साधक विषय और विषयभेद से मुक्त होकर आत्मा

के प्रकाश का प्रत्यक्ष अनुभव करता है। समाधि केवल क्षणिक अनुभव नहीं है, अपितु साधना की निरन्तरता में जब यह स्थिति स्थायी रूप से स्थापित हो जाती है, तब साधक 'कैवल्य' की प्राप्ति करता है। 'कैवल्य' में आत्मा पूर्ण रूप से प्रकृति और उसके गुणों से विलग होकर अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित रहती है। व्यासभाष्य में स्पष्ट कहा गया है कि समाधि आत्मा को उसकी शुद्ध चितिशक्ति में स्थापित करने का साधन है और यही अवस्था कैवल्य की परिणति है – **"कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा चितिशक्तेरिति"**[iii] **।** योगदर्शन में कहा गया है कि समाधि लक्ष्य तक पहुँचने का साधन है और 'कैवल्य' वह अन्तिम साध्य या परम लक्ष्य है – **"समाधिः साधनं कैवल्यं साध्यमिति सर्वैः सम्मतम्"**[iv] । जिस प्रकार दीपक का प्रकाश अन्धकार को दूर करके वस्तु का स्वरूप स्पष्ट करता है, उसी प्रकार समाधि चित्तवृत्तियों के आवरण को दूर करके आत्मा की शुद्ध सत्ता का बोध कराती है। यह बोध ही आगे चलकर कैवल्य की अनुभूति का मार्ग खोलता है।

योगदर्शन में समाधि की अवस्थाएँ साधक की साधना-यात्रा के विभिन्न सोपानों को सूचित करती हैं। प्रारम्भ में साधक 'सम्प्रज्ञात समाधि' में प्रविष्ट होता है और क्रमशः प्रगति करते हुए 'असम्प्रज्ञात समाधि' की ओर अग्रसर होता है। इस पूरी यात्रा में चेतना स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्म से निरविषयी अवस्था की ओर उन्नत होती है।

(1) सम्प्रज्ञात समाधि का स्वरूप - सम्प्रज्ञात समाधि वह अवस्था है, जिसमें चित्त एकाग्र होकर किसी विषय, विचार अथवा ज्ञान पर केन्द्रित रहता है। यहाँ वृत्तियों का निरोध तो होता है, परन्तु वह पूर्णरूपेण नहीं होता। विषय और ज्ञान का एक सूक्ष्म अंश अभी भी विद्यमान रहता है। इसीलिए इसे सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार, निर्विचार आदि उपविभागों में बाँटा गया है – **"वितर्कविचारानन्दास्मितारुपानुगमात् सम्प्रज्ञातः"**[v] । यह समाधि साधक के लिए प्रारम्भिक सीढ़ी का कार्य करती है।

(2) असम्प्रज्ञात समाधि का स्वरूप - जब साधक की साधना और गहन हो जाती है, तब विषयज्ञान का भी पूर्णतः लोप हो जाता है, तब चित्त किसी भी बाह्य या सूक्ष्म विषय से सम्बद्ध नहीं रहता। इस अवस्था में केवल आत्मा का शुद्ध स्वरूप ही शेष रहता है। यही स्थिति असम्प्रज्ञात समाधि है - **"विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः"**[vi] । इसमें न कोई विकल्प शेष रहता है और न कोई संकल्प, केवल आत्मस्वरूप का अनुभव रहता है। 'असम्प्रज्ञात समाधि' को योगदर्शन में 'कैवल्य' की ओर अन्तिम सेतु माना गया है। यहाँ साधक आत्मा और प्रकृति के भेद को प्रत्यक्ष रूप से अनुभव करता है। इस अनुभव के परिणामस्वरूप आत्मा प्रकृति से पूर्णतया विलग हो जाती है और

‘कैवल्य’ की परम स्थिति को प्राप्त करती है। इस प्रकार ‘सम्प्रज्ञात से असम्प्रज्ञात समाधि’ की यात्रा वास्तव में ‘कैवल्य’ की प्राप्ति की अनिवार्य साधना-प्रक्रिया है।

पातञ्जल योगदर्शन में ‘कैवल्य’ आत्मा की वह परमावस्था है, जहाँ वह अपने वास्तविक स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाती है। यह केवल दार्शनिक कल्पना नहीं, बल्कि साधना के चरम परिणाम का प्रत्यक्ष अनुभव है। ‘कैवल्य’ की अनुभूति में आत्मा प्रकृति और उसके गुणों से मुक्त होकर अपनी शुद्ध सत्ता का साक्षात्कार करती है। सामान्यतः आत्मा प्रकृति के तीन गुणों सत्त्व, रजस् और तमस् के साथ सम्बन्धित दिखाई देती है। इन्हीं गुणों की प्रवृत्तियों के कारण चित्त की वृत्तियाँ, कर्म और संसार-चक्र चलते रहते हैं, किन्तु ‘कैवल्य’ की अवस्था में आत्मा इन गुणों से पूर्णतः अतीत हो जाती है। वह न सत्त्वगुण के प्रकाश और प्रसन्नता में बँधी रहती है, न रजोगुण की चंचलता में और न तमोगुण की जड़ता में। आत्मा की स्थिति गुणत्रयातीत होकर शुद्ध चैतन्य में होती है –

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् ।

जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते[vii] **॥**

जब तक आत्मा गुणों से सम्बन्धित रहती है, तब तक वह संस्कारों और कर्मफलों के बन्धन में बँधी रहती है। इस कारण जन्म-मरण का चक्र चलता रहता है, किन्तु कैवल्य की अवस्था में आत्मा इन बन्धनों से मुक्त हो जाती है। संस्कार और कर्मफल का कोई सम्बन्ध शेष नहीं रहता। यही स्थिति कर्मक्षय और संस्कारशान्ति कहलाती है, जो आत्मा को पूर्ण स्वातन्त्र्य प्रदान करती है – **“तदा कर्मक्षयो भवति”**[viii]। ‘कैवल्य’ केवल नकारात्मक रूप से बन्धन-मुक्ति ही नहीं है, अपितु यह आत्मा की सकारात्मक अनुभूति भी है। आत्मा स्वयं में स्थित होकर अनन्त शान्ति और आनन्द का अनुभव करती है। यह आनन्द लौकिक सुख के समान क्षणिक नहीं है, अपितु आत्मा के शाश्वत स्वरूप का सहज प्रकाश है। यही कैवल्य की चरम उपलब्धि है, जिसे योगी परम लक्ष्यार्थ मानते हैं। पतञ्जलि ने इस अवस्था को संक्षेप में सूत्रबद्ध करते हुए कहा है कि जब गुणों का पुरुष (आत्मा) के लिए कोई प्रयोजन नहीं रह जाता, तब उनका प्रतिप्रसव होता है और आत्मा अपने स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाती है। यही अवस्था कैवल्य है -

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यम्।

स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति[ix] **॥**

अन्य भारतीय दर्शनों में 'कैवल्य' की व्याख्या -

पातञ्जल योगदर्शन में 'कैवल्य' को आत्मा की परम स्वतन्त्रता और स्वरूप-प्रतिष्ठा कहा गया है, परन्तु भारतीय दर्शन की अन्य परम्पराओं में भी कैवल्य अथवा मुक्ति की व्याख्या अपने-अपने दार्शनिक दृष्टिकोण से की गयी है। शब्दावली और पद्धति में भिन्नता अवश्य है, किन्तु सभी का अन्तिम उद्देश्य आत्मा या चेतना की पूर्ण स्वतन्त्रता ही है।

(1) चार्वाक् दर्शन – चार्वाक् दर्शन में मुक्ति या मोक्ष की अवधारणा अन्य भारतीय दर्शनों से सर्वथा भिन्न है। चार्वाक् के अनुसार शरीर के नष्ट होने (मृत्यु) को ही मोक्ष माना गया है – **"मरणमेव अपवर्गः"** ।

(2) जैन दर्शन – जैन दर्शन में भी मुक्ति को 'कैवल्य' ही कहा गया है। यहाँ 'कैवल्य' से तात्पर्य है – पूर्ण, अनन्तिम और स्वतन्त्र ज्ञान (सर्वज्ञता), जो आत्मा के कर्मों के नाश से प्राप्त होता है। जिस जीव ने 'केवल ज्ञान' प्राप्त कर लिया, उसे 'केवली' कहा जाता है। वे सर्वज्ञ हैं, जो तीन काल और तीन लोक के समस्त पदार्थों व उनकी पर्यायों को एक साथ जानते हैं। इन्हें 'जिन' या 'अर्हत' भी कहा जाता है। 'जिन' से ही जैन शब्द बना है। 'जिन' ही जितेन्द्रिय भी कहे जाते हैं।

(3) बौद्ध दर्शन - बौद्ध परम्परा में 'निर्वाण' को ही 'कैवल्य' का पर्याय कहा जा सकता है। निर्वाण का अर्थ है - क्लेश, तृष्णा और अविद्या का पूर्ण शमन। जब साधक इस शमन की अवस्था को प्राप्त करता है, तब वह संसार-चक्र अर्थात् जन्म-मरण के बन्धन से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार 'निर्वाण और कैवल्य' दोनों का भाव समान है – संसार से परे परम शान्ति और स्वतन्त्रता।

(4) सांख्य - योग दर्शन – सांख्य-योग दर्शन में 'कैवल्य' को पुरुष और प्रकृति के पृथकत्व के रूप में परिभाषित किया गया है। जब पुरुष यह प्रत्यक्ष अनुभव करता है कि वह प्रकृति और उसके गुणों से सर्वथा भिन्न है, तभी कैवल्य की प्राप्ति होती है। यहाँ मुक्ति का अर्थ किसी परम सत्ता में लीन होना नहीं, बल्कि पुरुष की स्वतन्त्र सत्ता का बोध है – **"तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः कैवल्यं चात्यन्तिकपरम्"**[x] ।

(5) न्याय - वैशेषिक दर्शन – न्याय-वैशेषिक में मुक्ति को 'अपवर्ग' कहा जाता है। इसका अर्थ दुःखों का आत्यन्तिक नाश है। यह आत्मा का शरीर, इन्द्रियों और मन के बन्धन से पूर्ण मुक्ति की अवस्था है, जहाँ सभी दुःखों का अन्त हो जाता है।

(6) मीमांसा दर्शन – मीमांसा दर्शन में मुक्ति या मोक्ष को स्वर्ग प्राप्ति से सम्बद्ध किया गया है, जो पुण्य अर्जित करने से प्राप्त किया जा सकता है।

(7) वेदान्त दर्शन - वेदान्त, विशेषतः अद्वैत वेदान्त दर्शन में 'कैवल्य' को 'मोक्ष' कहा गया है। यहाँ मोक्ष या मुक्ति को ब्रह्म के साथ एकत्व के रूप में स्वीकार करता है। शङ्कराचार्य के अनुसार आत्मा और ब्रह्म में भेद केवल अविद्या का परिणाम है। जब यह अविद्या नष्ट हो जाती है, तब आत्मा को अपने ब्रह्मरूप स्वरूप का अनुभव होता है। इस दृष्टि से कैवल्य अद्वैत का अनुभव है, जहाँ 'जीव-ब्रह्म अभेद' का प्रत्यक्ष साक्षात्कार होता है – **"अथातो ब्रह्मजिज्ञासा"**[xi]।

विभिन्न दृष्टिकोणों से स्पष्ट होता है कि यद्यपि भारतीय दर्शन-परम्पराएँ 'कैवल्य' की व्याख्या भिन्न-भिन्न शब्दों और पद्धतियों से करती हैं, तथापि उनका लक्ष्य एक ही है - आत्मा अथवा चेतना की परम स्वतन्त्रता और मुक्ति। योगदर्शन में यह स्वतन्त्रता 'पुरुष और प्रकृति' के भेद-ज्ञान (विवेकख्याति) से मिलती है, वेदान्त में 'ब्रह्म के साथ एकत्व' से और बौद्ध मत में 'निर्वाण' से मिलती है, किन्तु इन सभी की अन्तिम परिणति एक ही है - बन्धन से मुक्ति और शाश्वत शान्ति।

'समाधि और कैवल्य' का सम्बन्ध अत्यन्त गहरा तथा अविच्छेद्य है। योगदर्शन में यह स्पष्ट किया गया है कि समाधि का परम फल ही 'कैवल्य' है। यदि साधक केवल समाधि तक ही सीमित रह जाए और 'कैवल्य' की ओर अग्रसर न हो तो उसका साधना अधूरी रह जाती है। उसी प्रकार यदि कोई कैवल्य की आकांक्षा रखता है, परन्तु समाधि की साधना नहीं करता तो उसका लक्ष्य कभी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि 'कैवल्य' का एकमात्र मार्ग समाधि ही है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि समाधि योग का श्रेष्ठ साधन है और 'कैवल्य' उसका चरम लक्ष्य। दोनों का सम्बन्ध साधन और साध्य के समान है, जहाँ 'समाधि' साधन है और 'कैवल्य' साध्य। यही कारण है कि पतञ्जलि के योगसूत्रों में 'समाधि' को योग का प्राणतत्त्व माना गया है और 'कैवल्य' को उसकी परम परिणति।

समाधि एवं कैवल्य की प्रासङ्गिकता - आधुनिक युग में जहाँ मानव जीवन तीव्र गति, तनाव, प्रतिस्पर्धा और मानसिक अशान्ति से घिरा हुआ है, वहाँ 'समाधि' और 'कैवल्य' जैसी प्राचीन दार्शनिक अवधारणाएँ केवल आध्यात्मिक विषय नहीं रह जातीं अपितु व्यावहारिक जीवन के लिए भी अत्यन्त प्रासङ्गिक बन जाती हैं। ये दोनों अवधारणाएँ मनुष्य को आन्तरिक शान्ति, मानसिक सन्तुलन और जीवन के गहरे अर्थ की ओर प्रेरित करती हैं। समाधि जिसे योगसूत्र में चित्तवृत्तियों के पूर्ण निरोध की अवस्था कहा गया है, आज के सन्दर्भ में मानसिक एकाग्रता,

Mindfulness (सचेतनता) और गहन ध्यान की स्थिति के रूप में समझी जा सकती है। वर्तमान समय में बढ़ते तनाव, अवसाद और चिंता (Anxiety) जैसी समस्याओं के समाधान में ध्यान और योग की विधियाँ अत्यन्त प्रभावी सिद्ध हो रही हैं। समाधि का अभ्यास व्यक्ति को बाहरी विक्षेपों से हटाकर आन्तरिक स्थिरता और शांति प्रदान करता है। दूसरी ओर कैवल्य, जो पूर्ण स्वतन्त्रता और आत्मस्वरूप की अनुभूति की अवस्था है, आधुनिक जीवन में आन्तरिक स्वतन्त्रता (Inner freedom) और आत्म-साक्षात्कार के रूप में प्रासङ्गिक है। आज का मनुष्य बाहरी उपलब्धियों के बावजूद भीतर से असन्तुष्ट और बंधनग्रस्त अनुभव करता है। 'कैवल्य' की अवधारणा उसे यह समझने में सहायता करती है कि वास्तविक मुक्ति बाहरी परिस्थितियों में नहीं, बल्कि अपने भीतर की चेतना को पहचानने में है। 'समाधि और कैवल्य' की शिक्षाएँ आधुनिक मनोविज्ञान और जीवन-प्रबंधन (life management) से भी जुड़ती हैं। ध्यान, आत्मचिन्तन और वैराग्य जैसे सिद्धान्त व्यक्ति को बेहतर निर्णय लेने, भावनात्मक संतुलन बनाए रखने और जीवन में स्पष्टता प्राप्त करने में सहायक होते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि 'समाधि' और 'कैवल्य' केवल दार्शनिक या धार्मिक अवधारणाएँ नहीं हैं, अपितु आधुनिक जीवन की जटिलताओं से निपटने के लिए अत्यन्त उपयोगी मार्गदर्शक सिद्धान्त हैं। ये मनुष्य को बाह्य भौतिकता से ऊपर उठाकर आंतरिक शांति, संतुलन और परम सन्तोष की दिशा में अग्रसर करते हैं, जिससे जीवन अधिक सार्थक और सन्तुलित बन सकता है।

'समाधि' और 'कैवल्य' भारतीय दार्शनिक परम्परा के दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं परस्पर सम्बद्ध तत्त्व हैं, जो साधना और साध्य के रूप में एक-दूसरे की पूरक भूमिका निभाते हैं। समाधि जहाँ साधक की चित्तवृत्तियों के पूर्ण निरोध की अवस्था है, वहीं कैवल्य उस साधना का परम परिणाम है, जिसमें आत्मा अपनी शुद्ध, स्वतन्त्र और अखण्ड सत्ता में प्रतिष्ठित हो जाती है। योगदर्शन के अनुसार समाधि साधना की चरम अवस्था है, जिसके माध्यम से साधक धीरे-धीरे अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश जैसे क्लेशों से मुक्त होता हुआ अन्ततः 'कैवल्य' की प्राप्ति करता है। इस दृष्टि से समाधि को कैवल्य का साधन और अनिवार्य पूर्वावस्था माना जा सकता है। बिना समाधि के चित्त की पूर्ण शुद्धि और स्थिरता सम्भव नहीं और बिना इस शुद्धि के कैवल्य की प्राप्ति अधूरी रह जाती है। अद्वैत वेदान्त के परिप्रेक्ष्य में 'कैवल्य' या 'मोक्ष' आत्मज्ञान के माध्यम से प्राप्त होता है, जहाँ ब्रह्म और आत्मा की अभिन्नता का साक्षात्कार होता है। यहाँ समाधि को एक सहायक साधन के रूप में स्वीकार किया गया है, जो मन की एकाग्रता और अन्तःकरण की शुद्धि में सहायक होता है, किन्तु अन्तिम मुक्ति का कारण आत्मज्ञान ही माना गया है। इस प्रकार,

विभिन्न दर्शनों में समाधि और कैवल्य के सम्बन्ध को लेकर सूक्ष्म भिन्नताएँ होते हुए भी उनका अन्तिम लक्ष्य एक ही 'मुक्ति' है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि समाधि और कैवल्य के मध्य सम्बन्ध साधन और साध्य का है, जहाँ समाधि साधक को उस स्थिति तक पहुँचाती है, जहाँ से कैवल्य की अनुभूति सम्भव होती है। समाधि के बिना कैवल्य की प्राप्ति का मार्ग अत्यन्त कठिन हो जाता है, जबकि कैवल्य के बिना समाधि अधूरी मानी जाती है। दोनों की यह अन्तःसम्बद्धता भारतीय आध्यात्मिक साधना की गहनता और वैज्ञानिकता को उद्घाटित करती है। इस प्रकार 'समाधि' और 'कैवल्य' न केवल दार्शनिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, अपितु यह साधक के व्यावहारिक जीवन में भी दिशा प्रदान करता है, जिससे वह आत्मबोध, शान्ति और परम मुक्ति की ओर अग्रसर हो सकता है।

---

[i] योगसूत्र, 1.2, पृ. 10
[ii] व्यासभाष्य, 4.34, पृ. 179
[iii] व्यासभाष्य, 4.34, पृ. 179
[iv] योगवार्त्तिक, खण्ड - 4, पृ. 512
[v] योगसूत्र, 1.17, पृ. 34
[vi] योगसूत्र, 1.18, पृ. 35
[vii] श्रीमद्भगवद्गीता, 14.20, पृ. 189
[viii] व्यासभाष्य, 4.30, पृ. 164
[ix] योगसूत्र, 4.34, पृ. 170
[x] सांख्यकारिका, 62, पृ. 211
[xi] ब्रह्मसूत्रभाष्य, 1.1.4, पृ. 27

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. योगसूत्र (व्यासभाष्य सहित), चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2018
2. योगवार्त्तिक, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 2016
3. श्रीमद्भगवद्गीता, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2020
4. सांख्यकारिका, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2015
5. ब्रह्मसूत्र (शाङ्करभाष्य सहित), चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, 2017